# हस्तामलक स्तोत्रम्

**1. कस्त्वं शिशो ! कस्य कुतोऽसि गन्ता**
**किं नाम ते त्वं कुत आगतोऽसि।**
**एतन्मयोक्तं वद चार्भक त्वं**
**मत्प्रीतये प्रीति विवर्धनोऽसि।।**

हे बालक! तुम कौन हो, किसके हो, तुम्हारा गन्तव्य क्या है? तुम कहां से आए हो? तुम्हारा नाम क्या है? हमारे इन प्रश्नों का तुम उत्तर दो तो हमें प्रसन्नता होगी।

**2. नाहं मनुष्यो न च देवयक्षौ**
**न ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्यशूद्राः।**
**न ब्रह्मचारी न गृही वनस्थो**
**भिक्षुर्न चाहं निजबोधरूपः।।**

ना हम मनुष्य हैं, न ही देवता या कोई यक्ष हैं। न ब्राह्मण हैं, न क्षत्रिय, न वैश्य, न शूद्र हम हैं। हम न ब्रह्मचारी, न गृहस्थी न वानप्रस्थी तथा न ही संन्यासी हैं। इन सब से परे हम ज्ञानस्वरूप तत्त्व ही हैं।

**3. निमित्तं मनश्चक्षुरादिप्रवृत्तौ**
**निरस्ताखिलोपाधिराकाशकल्पः ।**
**रविर्लोकचेष्टानिमित्तं यथा यः**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा।।**

हम वह नित्य उपलब्ध आत्मतत्त्व हैं, जो मन चक्षु आदि समस्त करणों की प्रवृत्ति के लिए निमित्तरूप है, किन्तु मन चक्षु आदि समस्त उपाधि से परे आकाश की तरह निरुपाधिक है। जैसे समस्त लोक की चेष्टा सूर्य की सन्निधि मात्र से ही हुआ करती है, वैसे ही हमारी सन्निधि मात्र से ही समस्त करणादि चेतनवान् हो जाते हैं।

**4. यमग्न्युष्णवन्नित्यबोधस्वरूपं**
**मनश्चक्षुरादीन्यबोधात्मकानि ।**
**प्रवर्तन्त आश्रित्य निष्कम्पमेकं**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा।।**

हम वह नित्य उपलब्ध आत्मतत्त्व हैं, जिसका स्वरूप अग्नि की उष्णता की तरह नित्य ज्ञान स्वरूप है। जिसके द्वारा इन्द्रिय आदि समस्त करण जड़ होते हुए भी सत्तास्फूर्ति को प्राप्त करके अपने-अपने कार्य में प्रवृत्त होते हैं।

**5. मुखाभासको दर्पणे दृश्यमाने**
**मुखत्वात्पृथक्त्वेन नैवास्ति वस्तु ।**
**चिदाभासको धीषु जीवोऽपि तद्वत्**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा।।**

जैसे दर्पण में उपलब्ध हो रहे प्रतिबिम्ब का मुखरूप बिम्ब से पृथक् कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं होती, उसी प्रकार बुद्धि में प्रतिबिम्ब स्थानीय चेतनता के आभास रूपी जीव का भी हम बिम्ब स्थानीय चेतनता से पृथक् कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। हम वह ही नित्य उपलब्ध आत्मतत्त्व हैं।

**6. यथा दर्पणाभाव आभासहानौ**
**मुखं विद्यते कल्पनाहीनमेकम् ।**
**तथा धीवियोगे निराभासको यः**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ।।**

जैसे दर्पण में प्रतिबिम्ब दिखते हैं, और उसे हटा देने पर प्रतिबिम्ब दिखने बन्द हो जाते हैं, तब भी हम एक बिम्ब-स्थानीय स्थित रहते हैं, उसी प्रकार जब हमारा बुद्धि से वियोग हो (प्रतिबिम्ब विहीन), आभास की अनुभूतियों से रहित हम ही स्थित रहते हैं। वह जो 'मैं' की तरह से है, वह ही हम नित्य उपलब्धि स्वरूप हैं।

**7. मनश्चक्षुरादेर्वियुक्तः स्वयं यो**
**मनश्चक्षुरादेर्मनश्चक्षुरादिः ।**
**मनश्चक्षुरादेरगम्यस्वरूपः**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ।।**

हम नित्य उपलब्धि स्वरूप हैं, जो स्वतः मन-चक्षु आदि करणों से रहित है, तथा जो मन-चक्षु आदि का भी मन-चक्षु आदि रूप है। जिसे मन, चक्षु आदि करणों के द्वारा नहीं जाना जा सकता।

**8. य एको विभाति स्वतः शुद्धचेताः**
**प्रकाशस्वरूपोऽपि नानेव धीषु।**
**शरावोदकस्थो यथा भानुरेकः**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ।।**

जैसे एक विवेकी मनुष्य यह जानता है कि एक ही सूर्य अनेकों जलराशियों में अनेक रूपों से दिखाई पड़ता है, उसी प्रकार से शुद्ध अन्तःकरण से युक्त व्यक्ति यह देख लेता है कि एक ही नित्य उपलब्धि स्वरूप आत्म-तत्त्व अनेकों वृत्ति और उपाधियों में प्रतिबिम्बित हो रहा है, वह नित्य उपलब्धि स्वरूप आत्मतत्त्व हम हैं।

**9. यथानेकचक्षुः प्रकाशोरविर्न**
**क्रमेण प्रकाशीकरोति प्रकाश्यम्।**
**अनेका धियो यस्तथैकः प्रबोधः**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ।।**

जैसे एक सूर्य अनेकों चक्षुओं को और उनके विषयों को एक ही समय युगपत् प्रकाशित करता है। उसी प्रकार से यह चिन्मयी, नित्य उपलब्धि स्वरूप आत्मा अनेकों बुद्धि एवं उनकी वृत्तियों को युगपत् प्रकाशित करता है, वह नित्य उपलब्धि स्वरूप आत्मतत्त्व हम हैं।

**10. विवस्वत्प्रभातं यथारूपमक्षं**
**प्रगृह्णाति नाभातमेवं विवस्वान्।**
**यदाभात आभासयत्यक्षमेकः**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ।।**

जैसे सूर्य के द्वारा चिन्मय एवं स्फूर्तियुक्त करने के बाद ही हमारे चक्षु विविध रूपों को ग्रहण करती हैं, न अन्यथा। उसी प्रकार ये चक्षु आदि इन्द्रियां आत्मा के द्वारा स्फूर्ति प्राप्त करने के बाद ही अपने-अपने विषयों को ग्रहण करती हैं। वह नित्य उपलब्धि स्वरूप आत्मतत्त्व हम हैं।

**११. यथा सूर्य एकोऽप्यनेकश्चलासु**
**स्थिरास्वप्यनन्यद्विभाव्यस्वरूपम्।**
**चलासु प्रभिन्नासु धीष्वेवमेकः**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा।।**

जैसे एक सूर्य अनेक चंचल जलराशियों में चलित दिखाई पड़ते हुए भी निश्चल है। उसी प्रकार से हमारी अनेकों चंचल वृत्तियों में आभासित चिदाभास चंचल प्रतीत होती हुई भी निश्चल है। वह निश्चल नित्य उपलब्धि स्वरूप तत्त्व हम हैं।

**१२. घनच्छन्नदृष्टिर्घनच्छन्नमर्कं**
**यथा निष्प्रभं मन्यते चातिमूढः ।**
**तथा बद्धवद्भाति यो मूढदृष्टेः**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा।।**

जैसें बादलों के द्वारा आच्छादित सूर्य को देखते हुए एक मूढ़ व्यक्ति, जिसकी वस्तुतः दृष्टि बादलों के द्वारा आवृत्त है, वह मान लेता है कि सूर्य आज तेजविहीन है। उसी प्रकार मूढ़ व्यक्ति अपनी उपाधियों से अभिभूत होने के कारण नित्य उपलब्धि स्वरूप एवं नित्य मुक्त होते हुए भी अपने आपको अविवेकवशात् बद्ध मान लेता है। वह ही सदैव उपलब्ध स्वरूप आत्मतत्त्व हम हैं।

**१३. समस्तेषु वस्तुस्वनुस्यूतमेकं**
**समस्तानि वस्तूनि यं न स्पृशन्ति।**
**वियद्वत्सदा शुद्धमच्छस्वरूपं**
**स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा।।**

जैसे सब को अवकाश प्रदान करने वाले आकाश में विद्यमान धूल एवं गन्द आदि पदार्थ इस आकाश को कभी भी स्पर्श नहीं करते हैं। उसी प्रकार से सभी उपाधियों को सत्ता स्फूर्ति प्रदान करने वाला नित्य शुद्ध स्वरूप आत्मा हम ही हैं।

**१४. उपाधौ यथा भेदता सन्मणीनां**
**तथा भेदता बुद्धिभेदेषु तेऽपि।**
**यथा चन्द्रिकाणां जले चंचलत्वं**
**तथा चंचलत्वं ममापीह विष्णो।।**

हे विष्णो ! हमारे अन्दर भेद केवल उसी प्रकार से आभासित होते हैं जैसे भेद स्फटिक-मणि में उपाधि के भेद से आभासित होते हैं। हमारे अन्दर चंचलता भी उसी प्रकार से आभासित होती है, जैसे प्रतिबिम्बित चन्द्रमा में जल की चंचलता से चंचलता प्रतीत होती है।